प्राक्कथन

गाँव से लेकर शहर तक दलित से लेकर मजदूर और आदिवासियों तक फैला है संजीव के लेखन का कैनवास। संजीव के उपन्यास वर्तमान के साथ ही इतिहास और भूगोल के पुर्जे भी खोलती हैं परते भी। वैसे संजीव का परिवार ग्राम का रहा है। परिणामतःग्राम का शोषित चित्र उनके उपन्यासों में सहज मिलता है। धर्मांधता, जातिवाद और सामाजिक गैर-बराबरी को भी अपनी मार्क्सवादी वैचारिक प्रतिबद्धता के चलते असंगत बनाते हैं। साहित्य के द्वारा वर्जित क्षेत्र और वर्जित मनुष्य को न्याय देने हेतु संजीव प्रतिबद्ध हैं।

वर्तमान दौर में पूँजीवाद, उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण के कारण गरीब और भी गरीब बनता जा रहा है। निजीकरण के नाम पर देश की संपत्ति नीलाम हो रही है जिसकी कसक संजीव के उपन्यासों में देखी जा सकती है। आदिवासी समाज को आदिवासी ही बनाए रखने वाली व्यवस्था पर प्रहार करते है तो दूसरी ओर उनकी प्रचलित अंधधारणाओं और अरण्यमुखी संस्कृति को भी उनकी बदहाली के लिए जिम्मेवार मानते हैं। भ्रष्ट नौकरशाही, राजनीति, व्यवस्था, मजदूर संगठन और प्रबंध इनके लेखन में अपनी तमाम बर्बरता के साथ प्रस्तुत होते हैं। न्याय प्रक्रिया और पुलिस तंत्र के सच्चाई की भी वे पोल खोलते हैं। संजीव अपने समाज की विडंबना, विसंगतियों और चुनौतियों को सही रूप में परखते है और अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक समस्या को प्रमुख रूप से उठाते है। सत्ता और सत्ता को चलाने वाले ठेकेदार, भ्रष्ट पुलिस तंत्र, भू-माफिया कि वे गहरी पड़ताल करते हैं। गुलामी सत्ता से मुक्त हुए जनता की भारतीय शासन से बड़ी आशा और आकांक्षा थी, लेकिन जल्द ही जनता का यह स्वप्न टूट गया। आम जनता के जीवन में हर तरफ बेबसी और लाचारी छा गई। सामंती शोषण अब आदिवासी समाज पर हावी था। गोरे अंग्रेज तो चले गए उसके बावजूद भारतीय काले अंग्रेज शासन कर रहे थे। गाँव में अभी उच्च वर्ग का वर्चस्व बना हुआ था और आज के औद्योगिक प्रतिष्ठान उनके दमन और शोषण के प्रतीक बने हुए थे। अब भी गाँव के निम्न वर्ग के लोग न तो उनके सामने खाट पर बैठ सकते थे और न ही सिर उठाकर चल सकते थे। संजीव यह सब देखते हुए आदिवासी समाज के जीवन के विभिन्न आयामों को मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास करते हैं।

समकालीन कथाकारों में संजीव एक विशिष्ट कथाकार के रूप में चर्चित रहे हैं। उनके लेखन साहित्य जगत में मौलिक दृष्टिकोण और मौलिक चेतना से उद्धृत हुआ है। तभी कथित और परंपरावादी दृष्टिकोण को त्यागता हुआ संजीव का लेखन जीवन के विभिन्न आयामों से अपना सरोकार स्थापित करता है और समाज के वंचित तबकों को मुख्यधारा से जोड़ने का अथक प्रयास करता है। उनकी पहली व्यंग्य रचना 'किस्सा एक बीमा कंपनी की एजेंसी का' 'सारिका' पत्रिका में अप्रैल १९७६ ई॰ में प्रकाशित हुई तब से लेकर आज तक इनका लेखन अनवरत जारी है। संजीव की कथायात्रा किसी लीक की कथायात्रा नहीं बल्कि वंचित वर्ग की कथायात्रा है। संजीव भोगे यथार्थ को महसूस करते हैं। इनके लेखन में जीवन

की विविधता और आदिवासी समाज के संकट और संघर्ष का यथार्थ चित्रण दिखाई देता है। संजीव के उपन्यास पैंतीस वर्षों के आजाद भारतीय मानस के कैनवास पर उभरे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक यथार्थ के शिनाख्त हैं। देश के लाखों दलित, दमित, प्रताड़ित, उपेक्षित जनों की जिजीविषा और संघर्ष की यात्रा है। संजीव के उपन्यासों में 'किशनगढ़ के अहेरी', 'सर्कस', 'सावधान! नीचे आग है', 'धार', 'पॉव तले की दूब', 'जंगल जहाँ शुरू होता है', 'सूत्रधार', 'आकाश चंपा', 'रह गई दिशाएँ इसी पार' और 'फाँस' शामिल हैं।

स्नातकोत्तर अध्ययन के दौरान संजीव के उपर्युक्त अनेक उपन्यासों का मैंने अध्ययन किया। इन उपन्यासों में वर्णित आदिवासी समाज की पीड़ा एवं उनके दारुण कष्टों का अनुभव कर मैं भाव विह्वल हो गया। मैंने अनुभव किया कि आदिवासी समाज जिन कष्टों को झेल रहा है उसे जनसमुदाय के समक्ष लाने की आज परम आवश्यकता है। इस दिशा में किये गये समस्त साहित्यिक प्रयत्न मुझे अपर्याप्त लगे। अतएव मैंने निर्णय लिया कि स्नातकोत्तर परीक्षा के पश्चात संजीव के उपन्यासों पर शोध कार्य जहाँ इस समुदाय के लिए उपयोगी होगा वहीं दूसरी ओर देश के उत्थान और प्रगति में भी महत्वपूर्ण होगा अतएव मैंने 'संजीव के उपन्यासों में आदिवासी समाज की विस्थापन से उत्पन्न संकट और संघर्षः एक अनुशीलन' विषय पर शोध कार्य करने का निश्चय किया।

संजीव के उपन्यासों में आदिवासी समाज के विस्थापन से उत्पन्न संकट और संघर्ष का अनुशीलन करना एक दुष्कर कार्य अवश्य था परंतु माता-पिता के आशीर्वाद एवं मित्रों के सहयोग से मेरे प्रथम प्रयास में ही आज यह कार्य पूर्ण हो सका। परमपिता परमेश्वर की असीम अनुकंपा से महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय वडोदरा के हिंदी विभाग में पी•एच•डी• कक्षा में प्रवेश हुआ और शोध कार्य के लिए मुझे यही विषय आवंटित किया गया। प्रस्तुत शोध विषय को प्रबंध लेखन एवं अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित छः अध्यायों में विभाजित किया गया।

अध्याय एक - भारतीय नवजागरण : आदिवासी और विस्थापन

१.१- भारतीय नवजागरण के अन्तर्विरोध

१.२- भारतीय नवजागरण और हाशिये का समाज

१.३- विस्थापन का स्वरूप

१.४- औद्योगिक विकास और आदिवासी

अध्याय दो - संजीव : समय से साक्षात्कार

२.१- संजीव और उनका समय

२.२- संजीव का कृतित्त्व

२.३- संजीव की उपन्यास दृष्टि का विकास

२.४- हिन्दी में आदिवासी उपन्यास : रूपरेखा

अध्याय तीन - आदिवासी समाज विस्थापन और संघर्ष

३.१- आदिवासी समाज की अस्मिता का संघर्ष
३.२- आदिवासी समाज के विस्थापन की समस्या
३.३- जल, जंगल और जमीन का संकट
३.४- आदिवासी समाज में नारी

अध्याय चार - संजीव के उपन्यासों में विस्थापन से उत्पन्न आर्थिक और राजनीतिक संकट

४.१- विस्थापन की समस्या और संजीव के उपन्यास
४.२- जल, जंगल और जमीन का संकट और संजीव के उपन्यास

अध्याय पाँच - संजीव के उपन्यासों में विस्थापन से उत्पन्न सामाजिक संकट

५.१- नारी समस्या
५.२- आंतरिक समस्या
५.३- आदिवासी समाज के अन्य संकट और संजीव के उपन्यास

अध्याय छः - संजीव के उपन्यासों में विस्थापन से उत्पन्न धार्मिक और सांस्कृतिक संकट

६.१- धर्म का संकट
६.२- उत्सव और त्यौहार का संकट
६.३- आदिवासियों की भाषा पर संकट
६.४- प्रचलित कथा भाषा एवं आदिवासियों की भाषा

अंत में उपसंहार के रूप में सभी उपन्यासों के अंतर्गत विवेचित और विश्लेषित विवरणों को ध्यान में रखते हुए संजीव के उपन्यासों में अभिव्यक्त आदिवासी समाज के विस्थापन से उत्पन्न संकट और संघर्ष का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

शोध-छात्र
प्रेम शंकर सिंह